International Journal of Applied Research 2016; 2(11): 89-93

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2016; 2(11): 89-93
www.allresearchjournal.com
Received: 14-09-2016
Accepted: 15-10-2016

संगीता पाण्डेय
शोधार्थी – हिन्दी विभाग, अ.प्र. सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

Correspondence
संगीता पाण्डेय
शोधार्थी – हिन्दी विभाग, अ.प्र. सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

प्रसाद के काव्य : जीवन दृष्टि और स्वरूप

संगीता पाण्डेय

सारांश
सौन्दर्य की समग्र अनुभूति के क्षेत्र में चिन्तन और भावनागत जो भी उत्कृष्टतम तात्विक स्फूर्तियाँ मानव को आज तक उपलब्ध हुई है, प्रायः वे सब 'प्रसाद' के अनुभव पथ में आ चुकी हैं और उनके साहित्य में निरूपति की जा चुकी है, और इसी में 'प्रसाद' की सौन्दर्यानुभूति की पूर्णता निहित है। प्रसाद मूलतः युग सृष्टा साहित्यकार थे। केवल प्रत्यभिज्ञा दर्शन की उद्भावना, उनका लक्ष्य नहीं था। पुनरुत्थान युग के समग्र नवीन दर्शनों और भारतीय अद्वैत भावना के साथ युग मानव का पूर्ण विकास ही उनका प्रतिपाद्य रहा। लोकजीवन के प्रांगण में इहलोक के अनुकूल जड़ दर्शन और आत्मा के पूर्ण परिष्करण के लिए अद्वैत दर्शन के समन्वय में ही प्रसाद की दार्शनिक चेतना का आलोक मिलता है। प्रसाद की जीवन दृष्टि के अनुसार छायावाद की नवीन अभिव्यक्ति भंगिमा प्राचीन काल में भी समृद्ध रूप में विद्यमान रही है। उसके आत्म स्पर्श की अनुमति के साथ–साथ अन्तर दर्शन व्यंजना का सौन्दर्य भी दृष्टव्य है। इन्हीं मान्यताओं से छायावाद काल में जयशंकर प्रसाद की साहित्यिक जीवन दृष्टि सबसे अधिक पुष्ट हुई। श्रृंगार प्रवणता के अन्तर्गत प्रकृति के प्रतीकों द्वारा नारी के अतीन्द्रिय सौन्दर्य की वर्णन वाली चेतना प्रसाद काव्य में लक्षित होती है।

शब्द कुंजीः प्रसाद, काव्य, जीवन और स्वरूप, व्यक्तित्व, सौन्दर्य एवं दार्शनिक

प्रसाद का जीवन वृत्त
काशी के उत्तर–कीर्ति श्री, विद्या और विनय से सम्पन्न भक्ति–प्रधान सुँघनी साहू के माहेश्वर कुल में साहू देवी प्रसाद के कनिष्ठ आत्मज के रूप में श्री जयशंकर 'प्रसाद' का जन्म माघ–शुक्ल द्वादसी सन् 1889 में हुआ था। ''प्रसाद'' जी का यह जन्म बालक रूप में नहीं बल्कि एक युग पुरुष के रूप में हुआ था। काशी में इनका खानदान ''सुंघनी साहू'' के नाम से प्रसिद्ध था। काशी नरेश के बाद सर्वाधिक सम्मान इसी परिवार को प्राप्त था।

प्रसाद जी के व्यक्तित्व का निर्माण भी विषम घड़ियों में हुआ, जीवन और जगत के अनुभव से एक संसार के सम्बन्ध में दार्शनिक विचारधारा की सृष्टि हुई। प्रसाद जी का अपना अलग ही आदर्श था। परिस्थितियों को सुलझाने में प्रसाद के विचार पवित्र थे, क्योंकि पवित्र विचार का निर्माण पवित्र आदर्श की कोख से ही होता है। एक कहावत है व्यक्ति के जवानी के दिनों का वातावरण एक अमिट छाप छोड़ जाता है। यही पर प्रसाद जी भी छपने लगे थे। यही विचार आगे के लिए दृढ़ आधार प्रस्तुत किया। जीवन जगत का अनुभव आर्य जाति का राष्ट्रीय आन्दोलन, आदि ने प्रसाद के जीवन में दार्शनिक भावना का अंकुरण कर दिया। बड़े भाई ''शम्भुरत्न'' के जीवन काल से ही प्रसाद कविता से प्रेम रखने लगे थे। ''कविता कवि के ह्रदय की कली हैं''। यह कलियाँ बचपन से ही प्रसाद उद्यान में लदने लगी थी। असमय में घहराने वाली विपत्ति कवि के कोमल ह्रदय में टीस पैदा कर रहीं थी। इसी यौवन की मरती में मस्त, बड़े भाई द्वारा भेजे जाने वाली–सुंघनी, सुरती, जर्दा की दुकान पर, वही खाते की पृष्ठ पर लिखी कविता या प्रसाद को लिखते देखकर भाई साहब बहुत रूष्ट हुआ करते थे, क्योंकि दुकान में इससे कविता लिखने में व्यवधान हो जाता था।

प्रसाद का व्यक्तित्व विकास
भारतीय जीवन दर्शन और चिंतन की परम्परा में प्रसाद जी मानवता के उज्ज्वल भविष्य और लोक मंगल–मूलक आदर्शों के क्रांतदर्शी स्वप्नद्रष्टा और अग्रदूत थे। हिन्दी साहित्य में प्रसाद जी की लेखनी के द्वारा आस्था और आत्मवाद के जिस नये युग का प्रवर्तन हुआ छायावाद उसी की एक सुषमाभिव्यक्ति है। प्रसाद जी के व्यक्तित्व का निर्माण भी विषम घड़ियों में हुआ, जीवन और जगत के अनुभव से एक संसार के सम्बन्ध में दर्शनिक विचारधारा की सृष्टि हुई। प्रसाद जी का अपना अलग ही आदर्श था। परिस्थितियों को सुलझाने में प्रसाद के विचार पवित्र थे, क्योंकि पवित्र विचार का निर्माण पवित्र आदर्श की कोख से ही होता है। जीवन जगत का अनुभव आर्य जाति का राष्ट्रीय आन्दोलन आदि ने प्रसाद के जीवन में दार्शनिक भावना का अंकुरण कर दिया।

साधारणतया लोग प्रसाद को कोमल कलाकार के रूप में ही खोजने के आदी हैं, लेकिन इसमें कोई आश्चर्य नहीं है। प्रसाद की साहित्य साधना का सम्पूर्ण आधार जीवन की एक श्रेष्ठ बौद्धिक धारणा पर है। जीवन परिचय में लिखा जा चुका है कि बौद्ध दर्शन और संस्कृति की इनके जीवन पर गहरी छाप पड़ी है। किशोरावस्था में ही दीनबन्धु ब्रम्हचारी जो वेद उपनिषद आदि के प्रकाण्ड पण्डित थे। इन्हें इतिहास, संस्कृत आदि विषयों का अच्छा ज्ञान देने आया करते थे। ऐसे सात्विक शिक्षक को पाकर इनके जीवन में प्रथम बीजारोपण सात्विकता का हुआ। इनका कुटुम्ब परिवार कट्टर शैव था, इसका भी गहरा अध्ययन होने पर आजीवन ''प्रसाद'' शिव तत्वज्ञान की आनन्दात्मक वृत्ति ने स्फूर्ति देकर दुनिया के प्रति उत्कुल्ल बना दिया और स्फूर्ति मिली। इस प्रकार इनके व्यक्तित्व पर बौद्ध संस्कृति, वेद, उपनिषद, दीनबन्धु ब्रम्हचारी, दादा और बड़े भाई, शैव तत्वज्ञान, कवि सत्संग, स्वर्गीय वृजचन्द्र तथा अनेक कौटुम्बिक परिवर्तन और मानसिक उथल–पुथल का स्थाई प्रभाव पड़ा।

'प्रसाद' जी एक महान उच्च कोटि के महापुरुष थे। यहाँ व्यक्तित्व की दृष्टि से अभिप्राय समाज की उस इकाई या घटक से है जिसके द्वारा समाज का निर्माण और विकास होता है। प्रसाद कवि होने के कारण उदार, व्यापारी होने के कारण व्यवहार पटु, पुराणों संस्कृति आदि के गहन अध्ययन के कारण प्राचीनता की ओर झुके हुये, भारतीय आचारों, नियमों एवं भारतीय संस्कृति सभ्यता के प्रति ममत्व रखने वाले एवं एक सीमा तक पाश्चाम्य सभ्यता संस्कृति और गुणों के प्रति समाहार भाव। उन्नीसवीं शताब्दी में जन्म लेने के कारण और बीसवीं सदी में विकसित पुष्पित, पल्लवित होने के कारण व्यक्तित्व में दोनों शताब्दियों के उपकरण स्पष्ट परिलक्षित हैं।

उन्नीसवीं शताब्दी ने उन्हें ''रोमांस'' प्रति उत्कृष्टता, विलास, सरलता, मस्ती और झंझटों के प्रति एकांत प्रियता, सामान्य सुख से जीवन बिता लेने का भाव और बीसवीं शताब्दी ने उन्हें यौवन का प्रवाह, परिवर्तनशील प्रवृत्ति, भारतीयता की ओर झुकाव, विदग्धता तथा अस्थिर वेदना का दान दिया। प्रसाद जी को मानव और कवि की हैसियत से समझ के और उनका उत्कृष्ट व्यक्तित्व विश्लेषण करते समय इस बात को अच्छी तरह याद रखना पड़ेगा कि प्रसाद दो युगों के संयुक्त उपकरणों की उपज है। प्रसाद जी जो कुछ जीवन में बनें, जो कुछ जीवन में लिखा वह सब बीसवीं सदी के अंक में ही, फिर भी इस यात्रा का संबल, इस निर्माण का संचयन उन्नीसवीं शताब्दी के ही परिणामस्वरूप हैं।

प्रसाद जी ने जो कार्य अपने हाथ में लिखा उसमें हासिल करने का मूल आदर्श है, उनका उत्कृष्ट व्यक्तित्व। हम अपने भारतीय महान विभूतियों के आदर्शों, वीरत्व एवं कार्य कुशलता से आश्चर्य चकित हो उठते हैं। कवि प्रसाद के व्यक्तित्व का निर्माण उसके प्रत्यक्ष जीवन की अनुभूतियाँ, घटनाएँ परिस्थितियाँ, चारित्रिक विशेषताएँ, व्यवसायिक गुण, अध्ययन, चिन्तन आदि ही नहीं करते, वरन् उसमें जीवन के निरीक्षण एवं जीवन संबंधी विविध प्रकार की दृष्टियों का भी हाथ रहता है। [1]

दार्शनिक और मनोविज्ञानिक भूमि के विस्तार के साथ ही प्रसाद जी ने सामाजिक क्षेत्र में नये स्वतंत्र और नवीन आदर्शों का प्रवेश कराया जिनकी झलक हम विशेषकर उनके उपन्यासों में देखते हैं। यद्यपि प्रसाद जी के आदर्श, युग की प्रगति के अनुकूल, उनकी स्वतंत्र विचारणा के परिणाम थे, किन्तु हमें पाश्चात्य विचारकों से तुलना करनी हो तो हम कहेंगे की प्रसाद जी के सामाजिक आदर्श फ्रान्सीसी राज्यक्रान्ति के पश्चात प्रतिष्ठित होने वाले समता और स्वतंत्रता के आदर्शों से मिलते–जुलते हैं। एक उदार जन सतात्मक भावना और परम्परागत अभिजात्य का विरोध प्रसाद जी के कल्पनाशील, नवोन्मेषशाली साहित्य की आधार भूमि है। [2]

कवि व्यक्तित्व का निर्माण उसकी सभी प्रकार की अनुभूतियों, विचारों, धारणाओं, कल्पनाओं, दृष्टिकोणों, प्रवृत्तियों, अध्ययनों, निरीक्षणों, अभ्यासों, आदतों, स्मृतियों, कार्यों, चेष्टाओं आदि का हाँथ रहता है, यह दूसरी बात है कि सबकी अभिव्यक्ति कवि की एक ही कृति में न हो सके।

आचार्य शुक्ल का कहना है कि – ''सच्चा कवि वही है जिसे लोक हृदय की पहचान हो। जो अनेक विशेषताओं तथा विचित्रताओं के बीच मनुष्य जाति के सामान्य हृदय को देख सके।''

प्रसाद जी ने स्वयं करुणा का प्रलय प्रवाह पिता, बड़े भाई, पत्नी (दो–दो बार मृत्यु) की मृत्यु को प्रत्यक्ष देखा था। क्यों न किशोर हृदय झकझोर उठे। प्रसाद जी के आरम्भिक जीवन से कवित्व में प्रेम तत्व का प्रावलय दिखाई देता है।

श्री रामनाथ सुमन ने 'कवि प्रसाद की काव्य साधना' में प्रसाद के व्यक्तित्व का विश्वसनीय विश्लेषण किया है विश्वसनीय इसलिए कि वे प्रसाद के सम्पर्क में बहुत दिनों (1919 से लेकर 1936 के अन्तिम समय तक) रहे थे। अतः उन्होंने प्रसाद को पास से देखा था। साहित्यकार की हैसियत से नहीं, केवल मनुष्य के नाते, और वे बतलाते हैं कि मनुष्य प्रसाद साहित्यकार प्रसाद से कहीं महान थे, साहित्यकार प्रसाद तो प्रसाद की केवल एक आंशिक अभिव्यक्ति थे वे लिखते हैं– ''व्यक्ति की दृष्टि से जयशंकर प्रसाद एक उच्चकोटि के महापुरुष थे। वह कवि होने के कारण उदार, व्यापारी होने के कारण व्यवहारशील, पुराण, शास्त्र, संस्कृत काव्य आदि के विशेष अध्ययन के कारण प्राचीनता की ओर झुके हुये, भारतीय आचार्यों एवं भारतीय सभ्यता के प्रति समता रखने वाले तथा एक सीमा तक पाश्चात्य सभ्यता, सभ्यता के गुणों के प्रशंसक थे। उन्नीसवीं शताब्दी के अन्तिम चतुर्थांश में जन्म लेने और बीसवीं दोनों शताब्दियों के उपकरण दिखाई देते हैं। वह उनके बीच की चीज है। उन्नीसवीं शताब्दी ने उन्हें रोमांस के प्रति झुकाव, मस्ती विलासिता पूर्ण सरसता और झंझटों से यथा–सम्भव अलग रह कर सामान्य सुख के साथ जीवन बिताने के भाव प्रदान किये और बीसवीं शताब्दी ने उन्हें यौवन का प्रवाह परिवर्तनोन्मुखी प्रवृत्ति भारतीयता की ओर झुकाव, विदग्धता तथा अस्थिर वेदना का दान किया। ''यद्यपि उन्होंने जो कुछ लिखा है जो कुछ वे जीवन में बने, वह सब बीसवीं शताब्दी की गोद में ही चरितार्थ हुआ है, तथापि इस यात्रा का सम्बल, इस निर्माण का संचय उन्नीसवीं शताब्दी की ही क्रिया है। इसलिए प्रसाद जी हिन्दी कविता के पुराने और नये स्कूल के बीच की कड़ी हैं।''

प्रसाद का व्यक्तित्व उनकी सर्जनात्मक शक्ति एवं दार्शनिक दृष्टि के विकास के साथ क्रमशः विकसित होता गया है।

प्रसाद की सौन्दर्य दृष्टि

सौन्दर्य भावना की दृष्टि से सबसे व्यापक और सूक्ष्म चित्रण प्रसाद साहित्य में मिलता है। प्रसाद साहित्य की परिधि में देखा जाये तो उनकी सभी विधाओं में सौन्दर्य भावना की अनेक रंगीन छवियाँ मिल जाती हैं। मूलतः प्रसाद कल्पना और भावनाशील कवि हैं। उनके काव्य की आधार भूमि दार्शनिक मानवीय चिन्तन है। सौन्दर्य भावना की कलात्मक प्रवृत्ति उसे वास्तविकता की सजीवता प्रदान करती है और मानवतावादी प्रवृत्ति उसे उदात्त बनाती है। कल्पना और सौन्दर्य का क्रीड़ांगन स्वछन्दतावाद है। इसी भाव भूमि पर प्रसाद की सौन्दर्य भावना उजागर हुई है। प्रसाद आनन्दवादी कवि हैं और लौकिक धरातल पर देखा जाये तो सौन्दर्य, प्रेम और करुण के श्रोत से आनन्द की भावधारा प्रसाद साहित्य में त्रिवेणी बनकर प्रवाहित हुई है। आध्यात्मिक चिन्तन, संस्कार की महिमा, अनुभूति की गरिमा क्रमशः प्रसाद की सौन्दर्य भावना को एक विशिष्ट रूप प्रदान किया है।

प्रसाद साहित्य में रूप वर्णन की कुछ ऐसी विशेषताएँ हैं जो सौन्दर्य की प्रकृति एवं रूप की निर्धारक हैं। कवि की मान्यता है कि रूप की नैसर्गिकता में ही सच्चा सौन्दर्य है। प्रकृति का रूप नैसर्गिक होता ही है। मानवीय रूप को भी उनके साथ तूलित कर प्रकृतिक बनाने का प्रयत्न किया गया है। कामायनी वह

कुशुम है जो कानन अंचल में मंद पवन प्रेरित होकर सहज डोल रहा है। [3]

प्रसाद की मान्यता है कि सृष्टि में सब कुछ सुन्दर है। अपना हृदय प्रशान्त बनाये बिना इस सृष्टि में वह सच्चा सौन्दर्य दिखाई नहीं पड़ेगा। [4] वे तो इस सौन्दर्य को ही निरखने के लिए जन्म लेकर पृथ्वी पर आना चाहते हैं। [5] क्योंकि प्रिय का दर्शन वस्तुतः सौन्दर्य से कोई पृथक वस्तु नहीं है, स्वयं सौन्दर्य का दर्शन ही प्रिय का दर्शन है और सर्वत्र उस सौन्दर्य की प्रभा जगमगा रही है। [6] मानवी या प्रकृतिक, कैसा भी सौन्दर्य हो, है किसी दिव्य शिल्पी का ही कला–कौशल।

श्रृंगार की कृतिमता को लक्ष्य करके कवि का कहना है कि उतना ही स्वीजन सुलभ श्रृंगार पर्याप्त है जो स्वतंत्रता में बाधा न डालता हो नागरिकता की रतह वैभव विलाष से भी सैन्दर्य कृतिम हो जाता है। सौन्दर्य की अतिशयता कुसुम वैभव में लता समान प्रकृतिक वैभव पर निर्भर है। प्रसाद की ऐतिहासिक रचनाओं में प्रकृतिक और सांस्कृतिक वैभव विलाष की अनेक झांकियाँ प्रस्तुत की गयी हैं। परिस्थिति के अनुसार कुछ अवसरों पर उनके स्वास्थ रूप का प्रतिपादन भी किया गया है। वासना को उत्तेजित करने वाला वैभव विलाष स्वर्ग के खण्डहर में परिणित हो जाता है। ऐन्द्रिक रूप सौन्दर्य और वासना का निराकरण करते हुये शुद्ध सौन्दर्यानुभूति पर बल देने के लिए कवि ने रूप की सात्विकता का आग्रह किया है।

प्रसाद के सौन्दर्य बोध में एक ओर जहाँ सौन्दर्य में चाँदनी की शीतलता मिलती है। वहीं दूसरी ओर सूर्य की दीप्ति दृष्टिगोचर होती है, उनके द्वारा वर्णित काव्यों में स्पष्ट रूप से पता चलता है कि प्रसाद काव्य सौन्दर्य के पारखी हैं, ललित कलाओं में उन्होंने अंगांग सौष्टव स्वर विधान, शब्द योजना, रंग रेखा आदि वाह्य सौन्दर्य के उपादानों को महत्व न देकर आत्म सौन्दर्य पर बल दिया है। [7]

प्रसाद के सौन्दर्य वर्णन अनुशीलन से स्पष्ट होता जाता है, उन्होंने अपनी भावना कल्पना के द्वारा सौन्दर्य को रोमान्टिक और रंगीन बना दिया है, कामायनी, आँसू, लहर, झरना, प्रेम–पथिक, कानन–कुसुम, चित्राधार महाराणा का महत्व समग्र रचनाओं में सौन्दर्य भावना की परिपूर्णता है। प्रभाव की दृष्टि में सौन्दर्य भावना सृष्टि व्यापी प्रभाव है जो अपने प्रभाव से जड़ को चेतन या असुन्दर बना देता है।

प्रसाद की दार्शनिक भूमि

प्रसाद की दृष्टि में कविता से भी दर्शन का अनिवार्य सम्बन्ध है। आरम्भकाल में कवि अपने जीवन के सरस और सलिल काल की रचना करते हैं। वे ही कालान्तर में यौवन काल प्राप्त होने पर गम्भीर, दार्शनिक, वैचारिक साहित्य की सर्जना किया करते हैं। विचार चिन्तन तथा अनुभव लब्ध ज्ञान दर्शन कहा जाता है। प्रसाद पर विभिन्न दार्शनिक विचारों का प्रभाव पड़ा है। यही कारण है कि उन्होंने प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल तक इस देश की जो भी दार्शनिक परम्परा रही है उसे उन्होंने आत्मसात किया था। प्रसाद जी वेदों, उपनिषदों की दार्शनिक प्रणालियों का अवगाहन किया था तथा बौद्ध दर्शन के विचारों से प्रभावित थे। पाश्चात्य दार्शनिक विचारधाराओं से भी वह अनभिज्ञ नहीं थे। उनकी दृष्टि में अद्वैतवाद की प्रतिष्ठा अनुभूतिजन्य थी। वे इस ब्रम्हाण्ड के मूल में ईश्वर की सत्ता को स्वीकार करते हैं। दर्शन के सम्बन्ध में प्रसाद के अनुसार एकेश्वरवाद ''एकं सद्विप्रा बहुधावदन्ति'' को अपने काव्य में उपस्थित किया है। प्रकृति के मुक्त वातावरण में विचरण करने वाले वरुण, मारुत, सविता आदि के बीच प्रसाद ने विराट सत्ता का साक्षात्कार किया था। प्रसाद जी ने ईश्वर की अवर्णनीय और रहस्यपूर्ण सत्ता को समस्त भौतिक जगत के परिव्याप्त मानते हैं।

इस तरह प्रकृति के व्यक्त प्रसार में विराट सत्ता के दर्शन की प्रेरणा और अनुभूति प्रसाद में व्यापक रूप से दिखाई देती है। उनकी मूल प्रेरणा निःसंदेह वैदिक वांडमय और उसमें उपलब्ध वैदिक ऋषि का दर्शन ही है। इस तरह के वैदिक दर्शन को हम व्यापक रूप से प्रसाद की कविता में घुला मिला पाते हैं। प्रसाद के साहित्य में उपनिषद विषयक धारणाओं को हम व्यापक रूप में देखते हैं। उपनिषदों का वही ब्रम्ह प्रसाद द्वारा अनिर्वचनीय कहकर पुकारा गया है। वह सतचित और आनन्द स्वरूप कहा गया है। श्रद्धा को प्रसाद जी ने पराशक्ति बताया है। जो पहले गुरू बनकर मन को प्रवृत्ति की शिक्षा देती है फिर पत्नी बनकर उनकी गृहस्थी बसाती है और अन्त के पराशक्ति का रूप धारण कर उन्हें शिवलोक पहुँचा देती है। श्रद्धा का यह रूप 'दर्शन सर्ग' में प्रगट होता है। प्रसाद के समरसता सिद्धान्त का कामायनी में प्रतिपादन किया है। वह भी अद्वैत सिद्धान्त पर आधारित है। कामायनी की श्रद्धा विश्वास सम्बन्धित रागात्मिकावृत्ति है और इड़ा वृद्धि का प्रतीक है। प्रसाद ने श्रद्धा को प्रवर्तन शक्ति के रूप में चित्रित किया है जो मनुष्य को आनानुतिक ले जाती है।

प्रसाद अपने निजी परिस्थितियों, स्वभाव तथा विभिन्न प्रवृत्तियों के कारण बौद्धों के सिद्धान्तों से प्रभावित हुये थे। उनका करुणावाद और संसार की अनित्यता की झलक उनकी रचनाओं में पाते हैं। भारतीय दर्शन के साथ–साथ पाश्चात्य दर्शन का भी अध्ययन किया था। लहर, झरना, प्रेम पथिक, करुणालय, आँसू, कामायनी, महाराणा का महत्व आदि रचनाओं में यह प्रभाव सहज ही देखा जा सकता है। प्रसाद का वैचारिक दर्शन में मानव ईश्वर की प्रतिष्ठा हुई है। उनका प्रेम विश्व प्रेम में समाहित है। उनका दर्शन ईश्वर मानव का सेतु है।

जयशंकर प्रसाद श्रेष्ठ कवि सृष्टा होने के साथ दृष्टा और विचारक भी हैं। उनमें हमें चिन्तन शीलरूप दिखाई देता है। उन्होंने इस सृष्टि को परम सत्ता का अप्रतिम काव्य कहा है। इस प्रकार दर्शन के सम्बन्ध में प्रसाद के विचार आत्मा और परमात्मा के सम्बन्ध में अद्वैतवाद की मान्यताओं को स्वीकार किया है। प्रसाद ने प्रकृति को ब्रम्ह की शक्ति के रूप में स्वीकार किया है तथा प्रचुर परिणाम के प्रकृति का उपयोग किया है। परम तत्व की प्राप्ति के लिए प्रसाद के काव्य में साधना की अनिवार्यता बराबर अपनाई गई है। साधना द्वारा ही साधक प्रेमी अथवा आत्मा परमतत्व का साक्षात्कार कर सकती है।

''प्रसाद'' के दार्शनिक विचारों में सृष्टि और प्रलय एक ही क्रिया के दो रूप हैं। जीव और ब्रम्ह के सम्बन्धों की विवृत्ति होने के कारण उनके विचार में रहस्य भावना का समावेश स्वाभाविक है। प्रसाद ने मिलन के अलौकिक आनन्द की अनुभूति कराने वाली भावात्मक छवियों को प्रस्तुत किया है। प्रसाद के काव्यों में जीव को इस दिव्य अनुभूति के दर्शन विभिन्न रूपों में होते हैं। छायावादी कवि प्रसाद के साहित्य में मिलन की अपेक्षा विरह को अधिक महत्व प्राप्त हुआ है। समर्पण, सेवा, त्याग, तप, सहानुभूति, श्रद्धा, सहनशीलता प्रसाद की साधना के सच्चे उपकरण हैं, उनकी दृष्टि अन्तर्मुखी साधना से चित्त का विकास होना है। प्रसाद के विचारों में करुणा और शान्ति मानवता के कल्याण के अमोघ शस्त्र है।

प्रसाद साहित्य के परम्परागत दार्शनिक मन्तव्यों की धारा प्रवाहित है। उन्होंने जड़ चेतन की सरसता का आदर्श सामने रखा था। उसमें मानवता के कल्याण की तीव्र कामना दिखाई देती है।

प्रसाद का काव्य और दर्शन ये दोनों कलावादी दृष्टि के कारण अपूर्व बन पड़े है। उन पर विभिन्न दार्शनिक विचारों का प्रभाव पड़ा है। भारतीय दर्शन के अतिरिक्त पाश्चात्य दार्शनिक विचारधारा से वे प्रभावित थे। ऐसी स्थिति में हम यह देखते हैं कि उनके साहित्य पर बौद्धिक दर्शन का पूर्ण–प्रभाव है। उनकी दार्शनिक भूमि अद्वैतवाद के दर्शन से परिपुष्ट है। औपनिषदिक विचार धारा का भी प्रभाव के साहित्य पर पड़ा है। इसलिए औपनिषदिक विचार दर्शन को प्रसाद के दार्शनिक भूमि के रूप में स्वीकार किया जा सकता है।

प्रसाद पद शैव दर्शन का गम्भीर प्रभाव पड़ा है। उन्होंने शिवतत्व को कामायनी के रूप में स्वीकार किया है। प्रसाद ने जिस समरसता सिद्धान्त का प्रतिपादक किया है वह भी अद्वैत सिद्धान्त पर आधारित है। प्रसाद का आनन्दवाद शैव नाम से ही ग्रहण किया है। वे दोनों दर्शन और बौद्ध दर्शन का अत्यन्त निकट का सम्बन्ध है। इसलिए महाकवि प्रसाद जो वेदान्त से प्रभावित थे, उन पर बौद्ध दर्शन का प्रभाव बहुत कुछ पड़ा है। इसके अतिरिक्त प्रसाद की दार्शनिक भूमि पर भारत की पूरी दार्शनिक परम्परा की छाप है। पाश्चात्य दार्शनिक विचार धाराओं का भी प्रमुख उनके साहित्य में देखा जा सकता है। विवेकानन्द, रविन्द्र ठाकुर, महात्मा गाँधी का दर्शन प्रसाद के काव्य को उदात्तता और गम्भीरता प्रदान करता है। शैव दर्शन के अनुसार प्रसाद ने जगत को सत्य सुन्दर और चित्त का विराट वटु कहा है। उनके अनुसार यह जगत मंगल मय है। ईश्वर की इच्छा या संकल्प शक्ति का लीला विलप्य है। वह ईश्वर द्वारा निर्मित है। इस प्रकार प्रसाद की दार्शनिक भूमि भारतीय और पाश्चात्य दर्शन का परिणाम है।

नवीन मनोवैज्ञानिक दर्शन के अनुरूप प्रसाद ने प्रत्येक मनोवृत्ति सूत्रबद्ध परिभाषा में आबद्ध कर मानव चेतना के सूक्ष्म आवृत्त स्तर का अनावरण किया और आधुनिक जीवन की नवीनतम भूमियों का उद्घाटन किया। उस विश्व व्यापी वैचारिक होकर मानव की बहिर्मुखी उपलब्धियों के साथ मानवमन की विविध ऋजु–कुटिल और सूक्ष्मतम भावनाओं, अनुभूतिजन्य हृदय की अनन्य परिणतियों और कर्म–जीवन से उद्भूत एवं रूपायित अंतः चेतना को मानव जीवन के अनन्यतम राग–विरागों से अनुरंजित परिभूमि पर अभिव्यंजित कर दिया।

प्रसाद ने भावी भारत के सांस्कृतिक उन्नयन की कल्पना में निराश्रित नारी के अन्तर्दशन, नारी की पूर्ण सामाजिक प्रतिष्ठा और समस्त मानव की मुक्ति में नारी की उदात्त आस्थाओं का गांधीवादी दर्शन के माध्यम से उद्बोधन किया। अपनी स्थूल शक्ति, अह और स्वच्छंद मनोवृत्ति वाले गुहा मानव के सदृश मनु के विभ्रान्त अन्तर को पूर्णरूपेण परिष्कृत, परिमार्जित एवं आलोकित कर परिव्यक्ता श्रद्धा ने नारी के महिमामय उत्तरदायित्व का केवल निर्वाह ही नहीं किया, वरन् मानव जीवन को बृहत्तर पृष्ठिभूमि पर प्रतिष्ठित भी किया। श्रद्धा–मनु का पर्वता रोहण तो अत्यात्मिक उन्नयन का काव्यात्मक प्रतीक है।

प्रसाद की काव्यात्मक दृष्टि

श्रद्धावाद तथा अखण्ड आनन्दवाद के प्रतिष्ठापरक हिन्दी के अमर साहित्यकार 'प्रसाद' हिन्दी साहित्य में ही नहीं, भारतीय साहित्य में ही नहीं अपितु विश्व साहित्य में युग–युग तक अपना विशेष स्थान रखेंगे इसमें संदेह नहीं। कविता, कहानी, नाटक आदि के क्षेत्र में प्रसाद ने जिस चरम उत्कर्ष का साहित्य प्रणयन किया उससे वस्तुतः हिन्दी साहित्य का भण्डार समलंकृत और सम्पत्तिशाली बन गया।

प्रसाद जी का व्यक्तित्व हर दृष्टि से असाधारण कोटि का था। वे पूर्णतः साहित्यक प्रवृत्ति के थे। पान को छोड़कर उन्हें अन्य व्यसन नहीं था। [8] प्रायः दिन–रात ही उनके घर में अभ्यागतों के स्वागतार्थ भांग छनती रहती थी, किन्तु प्रसाद जी उसे भी नहीं लेते थे, क्योंकि सारी मस्ती तो उनके जीवन में थी, उनकी प्रकृति का अंग थी, बाहरी मस्ती किस काम की। उनकी जीवन–चेतना का यह बनारसी रंग और सात्विक प्रकृति हमें उनके काव्य में भी सर्वथा परिलक्षित होती है।

'प्रसाद' जी जिस तरह अपने साहित्य के क्षेत्र में महान् श्रृष्टा के रूप में दृष्टिगत होते हैं ठीक उसी प्रकार उनका जीवन भी महान् था। प्रसाद के जीवन में असंख्य घटनायें भरी पड़ी हैं, जो उनके मंगलिक लोक लक्ष्य की झांकी प्रस्तुत करती हैं। ऐसे पूर्ण पुरुष की पावन जीवन धारा का दर्शन करें।

प्रसाद जी के व्यक्तित्व की एक महती विशेषता उनकी समरस–जीवन–दृष्टि में निहित है। वे कभी भी कर्म यज्ञ से घबड़ाते नहीं थे। कर्म चाहे छोटा हो या महतु, साहित्यक हो या व्यवसायिक, सर्वत्र उनकी एक ही प्रकार सजगता, सचेष्टता विद्यमान रहती थी। प्रसाद जी के पुत्र रत्नशंकर ने उनके दैनंदिन कार्यों के सन्दर्भ में लिखा है कि ''कुछ देर तक मसालों और सुर्तियों का काम करते–करते वे सहसा कलम पकड़ लेते और 'कायामनी' की जिल्द में सहज ढ़ग से दस–बीस छन्द ढल जाते, गंध परिपाक के साथ हृदय और मन, भावनाओं की अभिव्यक्ति के लिए छंदों में भर उठते। लगभग आधी कामायनी और कितनी ही स्कुट कविताओं 'सुंधनी साहु' के सुर्ती के कारखाने में लिखी गयी हैं। [9]

प्रसाद जी के आत्मनिष्ठा और दृढ़ता भी अप्रतिम कोटि की रही है। उनके जीवन–काल में उनके कृतियों की कटु से कटु आलोचनायें की गयी, किन्तु उन्होंने कभी भी उनका उत्तर या स्पष्टीकरण देने का प्रयास नहीं किया। एक बार उनके मित्र व्यास जी ने ऐसा प्रयास किया भी तो प्रसाद जी ने उनकी उस पाण्डुलिपि को फाड़ डाला। उत्तर में उनका कथन था कि ''मेरी कृतियाँ टेक लगाने से नहीं टिकेगी, वे स्वयं अपने बल पर टिकेगी'' उनका यह आत्म विश्वास समय की कसौटी पर खरा उतरा। आज उनकी कृतियों की लोकप्रियता किसी की वैशाखियों के कारण नहीं प्रत्युत उनमें निहित गरिमा, उदात्त जीवन–दृष्टि तथा मानवीय जीवन की गहरी, अनूठी अभिव्यंजनाओं के कारण ही है।

'प्रसाद' जी को संगीत से अत्यधिक प्रेम था। उनके निकट सम्बन्धियों का कथन है कि वे प्रायः ब्रम्ह मुहूर्त में उठकर संस्कृत के श्लोकों की संगीतमयी स्वर लहरी का सर्जन भी करते चले। साहित्य और संगीत का घनिष्ठ सम्बन्ध है। उन्हें अच्छी तरह अभिहित था। इसलिए अपने पुत्र श्री रत्नशंकर को सितार, हारमोनियम तथा तबले की शिक्षा प्रदान कराई। पूजा तथा नित्य संध्या के नियमों के वे बड़े पक्के थे। स्वयं नियमपूर्वक नित्य पूजन किया करते।

'प्रसाद' जी शिव के परमोपासक थे, परिवार में इसका अभाव देखकर कभी–कभी नाराज भी हो जाया करते थे। वे कहते थे ''जो अपनी नित्य की संध्या पूजा नहीं कर सकता वह मेरा श्राद्ध और स्मृति कैसे रखेगा।'' प्रसाद को व्यायाम से भी शौक था। प्रसाद ने संस्कृत, अंग्रेजी का विशेष अध्ययन घर पर ही किया था। ''प्रसाद'' जी जीवन भर शिव के कट्टर भक्त रहे। शिवत्य की साहित्य में उन्होंने आयोजन की काव्य और कहानी में शिवत्व की भावनाएँ अभिव्यक्त की और अन्तिम क्षण में शिव का ध्यान रखते हुये ही महाप्रयाण किया। ''प्रसाद'' जो जयशंकर प्रसाद थे।

प्रसाद जी असत्य विज्ञापन और प्रचारों से काफी दूर रहते थे। साहित्यिक दलबादी से उन्हें घृणा थी, वे जीवन में समरसता के साधक थे। वेदना और जीवन की वास्तविकता उनकी आँखों से कभी ओझल न हुई। एक बार प्रसाद जी ने अपने निकट सम्बन्धी से कहा था मैं यह सब कुछ नहीं कर रहा हूँ यह मेरा पूर्व जन्म का संस्कार सब कुछ कर रहा है।

प्रसाद ने भारतीय वाग्डमय का अत्यंत गम्भीर अनुशीलन किया था। कविता के क्षेत्र में पौराणिक युग की किसी घटना अथवा देश–विदेश की सुन्दरी वाह्य वर्णन से किया, जब वेदना के आधार पर स्वानुभूतिमयी अभिलक्षित होने लगी तब हिन्दी में उसे छायावाद के नाम से पुकारा गया। प्रसाद जी की अभिरुचियाँ भी पूर्णतः परिष्कृत थी। नौका विहार कुश्ती लड़ने और शतरंज खेलने की ओर उनकी विशेष रुचि थी कभी–कभी सिनेमा देखने भी जाते थे किन्तु उसी समय जब चित्र ह्यूगो, टालस्टाय, ड्यूमा जैसे साहित्यकारों की रचनाओं पर आधारित हो। यह तथ्य उनकी शालीनता का ही प्रतीक है, जो उनके साहित्य की भी वस्तु और शैली का प्रमुख लक्षण रहा है।

प्रसाद की जीवन दृष्टि अनुभूति और अभिव्यक्ति की भंगिमा पर अधिक निर्भर करती है। लाक्षणिकता, ध्वन्यात्मकता, सौन्दर्यमयता, दार्शनिकता, विधान प्रतीक विधान तथा उपचार वक्रता के

स्वानुभूति की प्रवृत्ति उनके साहित्यिक दृष्टि की विशेषता है। प्रसाद जी ने छायावाद को भारतीय काव्य परम्परा की वस्तु कहा है और उसे साहित्य परम्परा के चीज के रूप में ही दिखाया है। छायावादी काव्य में अभिव्यक्ति की नवीनता प्रसाद जी के अनुसार उसकी असाधारण विशेषता है। अभिव्यक्ति के इस नवीनता की सृष्टि नवीन शब्दों के द्वारा उतनी नहीं जितनी शब्द योजना के द्वारा हुई है।'' [10]

'प्रसाद' ने आरम्भ के छायावाद में अपनी भारतीय एवं संस्कृति मूल्यों का अनुशरण किया। इस प्रकार शब्दों के नये व्यवहारों से प्रसाद के जीवन दृष्टि में नयी अभिव्यक्तियाँ सार्थवान होकर प्रकट होने लगी। अभिव्यक्ति का यह निराला ढंग ही हिन्दी में प्रसाद साहित्य छाया कान्तिमयी होकर आया। उस अभिव्यंजना में छायावादी समृद्ध परम्परा रही। छायावाद के छाया शब्द को लेकर प्रसाद उसका मेल बिठाने के लिए कुन्तक और आनन्द वर्धन तक गये। शब्द और अर्थ की यह स्वाभाविक वक्रता प्रसाद जीवन दृष्टि में छाया और कान्ति की सर्जना करती है।

सन्दर्भ :

1. कामायनी अनुशीलन, पृष्ठ 119, डॉ. आर.एल. सिंह.
2. जयशंकर प्रसाद, पृष्ठ 24, श्री नन्ददुलारे वाजपेयी.
3. कामायनी, नवम् संस्करण 2013, पृष्ठ 30, जयशंकर प्रसाद.
4. झरना, पृष्ठ 52, जयशंकर प्रसाद.
5. वही, पृष्ठ 54.
6. कानन कुसुम, पृष्ठ 51, जयशंकर प्रसाद.
7. कामायनी, नवम् संस्करण 2013, पृष्ठ 98, जयशंकर प्रसाद.
8. आँसू और अन्य कृतियाँ, पृष्ठ 144–145, कवि प्रसाद.
9. प्रसाद का साहित्य, पृष्ठ 24.
10. छायावादी काव्य, पृष्ठ 39, डॉ. कृष्णचन्द्र वर्मा.